जय प्रकाश नारायण – समाजवादी शैक्षिक चिंतक के रूप में

संदीप मिश्र
शोध छात्र
शिक्षा संकाय
लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

जयप्रकाश नारायण का चिन्तन एक अमूर्त विचारधारा नहीं वरन सामाजिक परिस्थितियों से उत्प्रेरित एक व्यवस्थित विचारधारा है। इस विचारधारा की व्याख्या ज्ञान के समाजशास्त्र की अवधारणाओं, उपागमों एवं पद्धतियों के सदर्भ में व्याख्या एवं विश्लेषण का एक नवीन आयाम प्रस्तुत करती है। जयप्रकाश की विचारधारा चिन्तन और क्रिया के पारस्परिक अन्तःक्रिया और समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण है। भारतीय समाज में उनका स्थान एक समाजवादी, राष्ट्रभक्त, राजनीतिज्ञ के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगा। वह भारतीय समाज में हमेशा अंग्रिम पंक्ति के नेता रह है। जयप्रकाश मार्क्सवाद, गांधीवाद से होकर सर्वोदय तथा संपूर्ण क्रांति तक पहुंचते है और इस प्रकार उनके समाजवादी चिन्तन का स्वरूप ही विभिन्न दिशाओं वाला कहा जा सकता है। उन्होंने युवावस्था में ही स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेते हुए महात्मा गांधी का नेतृत्व स्वीकार किया। उन्होंने उद्योगों की स्थापना में इस तथ्य को अनिवार्य बतलाया कि लघु उद्योगों की स्थापना इस आधार पर की जाय कि ग्राम और शहर का अन्तर घटता जाय तथा ग्राम अपने आपमें स्वावलम्बी बन सके। जय प्रकाश ने समाज को समाजवादी आदर्शों की ओर उन्मुख होने के लिए उत्पादन और विनियम में सामंजस्य स्थापित करने का विचार रखा है। यदि जयप्रकाश नारायण के सामाजिक, आर्थिक सिद्धान्तों पर अर्थव्यवस्था का निर्माण किया जाये तो अवश्य ही स्वाभाविक, आर्थिक समता का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

1. प्रस्तावना

42वें संविधान संशोधन 1976 के अंतर्गत संविधान की उद्देशिका में जोड़ा गया समाजवाद शब्द यह दर्शाता है कि हमारी सरकार किस स्तर तक व्यक्ति की गरिमा और समाज के प्रत्येक वर्ग को समानता के आधार पर शिक्षा देने के लिए कटिबद्ध है। किन्तु स्तंन्त्रता प्राप्त हुए लगभग 68 वर्ष से भी अधिक हो गये हैं और हम आज की समाजवाद की वास्तविक स्थापना से कोसों दूर हैं। यद्यपि इस स्तर पर महिला सशक्तीकरण, विभिन्न वर्गो हेतु आरक्षण देकर समाजवादी समाज की स्थापना हेतु प्रयास किये गये किन्तु उपेक्षित सफलता प्राप्त न हो सकती है।

मूलतः समाजवाद पाश्चात्य जगत की विचारधारा है जिसका जन्म औद्योगिक क्रांति के साथ उत्पन्न समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में हुआ था क्योंकि क्रांति के पश्चात् जो व्यवस्थायें विकसित हुई वे न सिर्फ विशाल थी वरन घोर विश्रंखलन और विषमताओं से परिपूर्ण थी। इसी पृष्ठभूमि से समाज को संतुलित आकार देने के उद्देश्य से समाजवादी आंदोलन प्रारम्भ हुआ। समाजवाद एक ऐसी विचारधारा है जो व्यक्ति की अपेक्षा विचार को प्रमुख स्थान देती है और यह मानती है कि व्यक्ति को समाज के लिए स्वयं को समर्पित कर देना चाहिए। यह व्यक्तिवाद पर आधारित निजी व्यवसाय के स्थान पर समाज द्वारा संचालित अर्थव्यवस्था का समर्थन करती है। इस सिद्धान्त के अनुसार समाज की सामूहिक उन्नति पर ही सभी व्यक्तियों की उन्नति निर्भर है। सामूहिक हित के समक्ष व्यक्तिगत स्वार्थ को तुच्छ एवं गौण समझती है। भारतीय समाज में सार्वभौमिकता की भावना अपनी उन्नति के साथ समस्त विश्व के कल्याण की कामना करती है और इसी भावना से प्रेरित होकर हमारे मनीषियों ने संपूर्ण विश्व को एक मानकर विश्व बंधुत्व एवं वसुधैव कुटुम्बकम जैसे सिद्धान्तों की व्याख्या की है।

भारतीय परिपक्ष्य में समाजवाद की परिकल्पना जे. पी. के बिना अधुरी है। एक सर्वोदयी विचारक के रूप में उनका स्थान आचार्य विनोवा भावे के साथ बड़े आदर से लिया जाता है। समाजवाद का प्रमुख उद्देश्य समाज का समन्वित विकास करना है। केवल उद्योगों के राष्ट्रीयकरण तथा वेतन की समानता से ही समाजवाद नहीं लाया जा सकता है बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में समानता एवं सम्पन्नता के द्वारा ही समाजवाद लाया जा सकता है। समाजवादी अर्थव्यवस्था की संरचना विकेन्द्रित होनी चाहिए। इस हेतु गृहउद्योग, कुटीर उद्योग एवं छोटे उद्योगों की देशभर में स्थापना का लक्ष्य प्राप्त करना चाहिए। वह क्रांतिकारी समाजवाद की अपेक्षा लोकतांत्रिक समाजवाद के इच्छुक थे। उनकी विचारधारा के विभिन्न आयाम निम्नांकित है

2. जातिवाद एवं कुरीतियों का उन्मूलन

जे. पी. जातीयता को एक अभिशाप मानते थे। जातिवाद को मिटाना कुछ सदंर्भो में वर्ग को मिटाने से ज्यादा महत्वपूर्ण है। मानव की श्रेष्ठता का निर्धारण उनके ज्ञान, चरित्र के आधार पर होना चाहिए न कि जाति, गोत्र के आधार पर। उन्होंने जातिगत चिंहों जैसे तिलक, टीका, माला आदि का बहिष्कार किया। वर्गो का विभाजन जन्म के अनुसार उचित नहीं है; इसे गुण कर्म के अनुसार होना चाहिए। जब तक इस असमानता के मध्य दीवार को समाप्त नहीं किया जाता, समाजवादी समाज की कल्पना कोरी होगी।

भारतीय समाज ने प्राचीन काल से इस संकीर्ण व्याख्या को अपना रखा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि वर्णाश्रम व्यवस्था जन्म के आधार पर न होकर ज्ञान, चरित्र के आधार पर होनी चाहिए। पिछड़े, कमजोर, निकृष्ट, शूद्र व्यक्तियों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ना होगा। संविधान के अनुच्छेद 46 के अंतर्गत कमजोर एवं पिछड़े वर्गो के लिए विशेष अवसर प्रदान किये गये है। इसके अतिरिक्त अनु. 330 लोकसभा में एससी और एसटी तथा अनु. 332 विधानसभा में इन जातियों को आरक्षण की व्यवस्था प्रदान करता है। अनुच्छेद 338, 338 (क) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग एवं जनजाति आयोग तो इस संदर्भ में मील का पत्थर साबित हुआ है क्योंकि उसने समय–समय पर इर जातियों के अधिकारों के हनन से सुरक्षा प्रदान की है। अश्पृश्यता एक अभिशाप है और जब तक इस अभिशाप से लोगों को मुक्ति नहीं मिलेगी, समानता की भावना की स्थापना करना असम्भव है।

3. स्त्री समाज की मुक्ति का आहवाहन

समाजवाद की स्थापना में स्त्री एवं पुरूष का एकाकार होना आवश्यक है। स्त्री समाज को हीन, कमजोर और निकम्मा मानने और बनाने की प्रवृत्ति ही समाज को रोगग्रस्त बनाए हुए है। संकीर्ण मार्नासकता में ही पुरूष समाज, स्त्री समाज पर विभिन्न प्रकार के अत्याचार करता आ रहा है। राजनीतिक दृष्टि से लोकतंत्र सबकी स्वतंत्रता का आश्वासन करती है। इसी से समाजवादियों ने राष्ट्रीयता और लोकतंत्र दोंनो को समान रूप से स्वीकार किया है। इन दोनों के अभाव में समाजवाद की कल्पना निरर्थक हो जाती है। जे. पी. का मानना था कोई भी समाज स्त्री विरोध से सुन्दर और पुष्ट नहीं बन सकता। स्त्रियों को पुरूषों के समान विकास कार्यों मं समान अवसर मिलना चाहिए। यही समानता का अवसर सिद्धान्त है। महिलायें समाज का आधा भाग है, बिना उनकी उन्नति के कोई भी समान उन्नति नहीं कर सकता। इनकी उन्नति व विकास के लिए आवश्यक है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र विशेषकर राजनीति में उनका सशक्तिरण हो। इनकी सहभागिता को अधिक सशक्त बनाने हेतु भारत सरकार ने पंचायती राज अधिनियम के अंतर्गत पंचायतों में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की है। यद्यपि पिछले कई वर्षो से महिला आंदोलनों की प्रभावशाली उपलब्धियाँ रही है। परन्तु इसके पश्चात् भी राजनीतिक शक्ति

संरचना में उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व देखने को नहीं मिलता। आज भी संपूर्ण विश्व में औसतन 12–13 प्रतिशत महिलायें ही विधायी संस्थाओं हेतु निर्वाचित हो रही है। भारत म भी कमोवेश यही स्थिति है। महिलाओं को सशक्त करने के लिए महिला आरक्षण विधेयक पर विचार चल रहा है। यद्यपि भारत की लगभग सभी राजनीतिक पार्टियों के मध्य सहमति नहीं बन पाई है। लेकिन आज या कल में बन ही जायेगी जिसके फलस्वरूप संसद तथा विधानमंडलों में $1/3$ महिला आरक्षण लागू हो जायेगा। वर्तमान संदर्भ में स्त्रियों को मुख्यधारा में लाने हेतु ही महिला समस्या कार्यक्रम, राष्ट्रीय महिला आयोग, महिलाओं के यौन उत्पीड़न से संरक्षण अधिनियम 2005 आदि कार्यक्रम संचालित है।

4. सर्वोदय एवं भूदान

जय प्रकाश का सर्वोदय से तात्पर्य समाज के सभी व्यक्तियों का उदय, सबकी भलाई और सबकी उन्नति से था। सबका भला तभी सम्भव होगा जब अपनी भलाई को भूलकर दूसरों की भलाई को ध्यान में रखा जाये। सर्वोदय समाज में सभी व्यक्ति अपने–अपने स्वार्थ के लिए नहीं जियेगें बल्कि दूसरे समाज के लिए या सबके स्वार्थ के लिए जियेगें, लड़ेगें, मरेगें। अर्थात सर्वोदय समाज एक ऐसा समाज होगा जो निः स्वार्थ आधार पर खड़ा होगा। यह एक अहिंसक, शोषण रहित, सहकारिता के आधार पर समाज है। कृषि भूमि पर स्वामित्व का अधिकार जमीन जोतने वाले को दिया जायेगा। सार्वजनिक राजस्व का 50 प्रतिशत भाग ग्राम पंचायतों द्वारा खर्च किया जायेगा। इसी विचारधारा को ध्यान में रखकर 73वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत पंचायती राज अधिनियम की स्थापना की गई और ग्राम पंचायतों को अधिक सशक्त बनाया गया। सर्वोदय का लक्ष्य समाज के सभी वर्गो एवं व्यक्तियों का कल्याण है जिसके 5 आधार है।

- जातिरहित और वर्गरहित समाज की स्थापना।
- सार्वजनिक क्षेत्र में स्वच्छ और कुशल प्रशासन।
- सामाजिक व्यवस्था का आधार विकेन्द्रीकृत।
- समस्त शक्ति जनता को प्राप्त होना।
- अधिकारी वर्ग द्वारा अपने आपको जनता का स्थायी नहीं अपितु स्वामी समझना।

विनोवा की भूदान की विचारधारा का जे.पी. ने अपने जीवन में उत्कर्ष किया। भूदान का उद्देश्य भूमिहीन किसानों को भूमि दिलाना था जिससे कि भूमि के व्यक्तिगत नियंत्रण के स्थान पर सामूहिक नियंत्रण स्थापित हो सके। इस प्रकार सर्वोदय राज्यविहीन, दल विहीन, शासन व्यवस्था, ग्राम स्वराज, पंचायती राज, सहयोगी प्रजातंत्र, आर्थिक व राजनीतिक विकेन्द्रीकरण आदि को महत्व देकर एक आत्मनिर्भर, शांति प्रिय, स्वैच्छिक, अहिंसात्मक एवं नैतिक समुदाय के निर्माण का कार्यक्रम है।

5. सामुदायिक प्रजातंत्र

सामुदायिक समाज की कल्पना जे. पी. के सामाजिक राजनीतिक चिंतन की देन है। यह कल्पना क्षीण रूपेण उनके मस्तिष्क में उस समय भी विद्यमान थी जब वे प्रख्यात मार्क्सवादी और गाँधीवाद के प्रखर आलोचक थे। उनका मानना था कि सामुदायिक समाज का निर्माण और विकास तभी संभव है। जब ग्राम–ग्राम में सामुदायिक भावना की सृष्टि होगी। सामुदायिक समाज, सामुदायिक लोकतंत्र एवं सामुदायिक राज–व्यवस्था के निर्माण के लिए आधारभूत शर्त यह है कि गाँव एक वास्तविक समुदाय बन सके और जब तक सभी लोगों के हितों में समानता नहीं होगी। तब तक ग्राम समुदाय नहीं बनेगा। वर्तमान दलीय राजनीति को ग्राम से तत्काल निर्वासित किया जाये और प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली पर आधारित संसदीय व्यवस्था को समाप्त कर अप्रत्यक्ष चुनाव प्रणाली के आधार पर सामुदायिक व्यवस्था की नींव रखी जाये। इस व्यवस्था में लोकतंत्र तभी परिपूर्ण होग

जब तंत्र का संचालन स्वयं लोक करेगा, लोक प्रतिनिधि नहीं। आने वाला समाज प्रत्यक्ष लोक शासन का है। जे.पी. ने पंचायती राज की सरकारी योजना के कंकाल में सामुदायिक समाज का रंग भरने और उसके दर्शन और चिंतन को स्पष्ट करने का कठिन प्रयास किया है। उनके सामुदायिक समाज की परिकल्पना में समाजवाद है, लोकतंत्र है, सर्वोदय है, सत्य, अहिंसा है, मार्क्स की राज्यविहीन, वगहीन और गांधी के ग्राम पंचायत आधारित महासमुद्रीय समाज की कल्पना भी है।

जय प्रकाश के विचारों के संदर्भ मं यह स्पष्ट है कि उनके विचार विविध क्षेत्रो सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, शैक्षिक आदि सभी क्षेत्रों से सम्बन्धित है। स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा क्षेत्र में अब तक काफी उन्नति हो चुकी है। अनेक आयोगों एवं समितियों की स्थापना के फलस्वरूप शिक्षा की लक्ष्य प्राप्ति नहीं हो सकी है। विद्यालय में नामांकन तो बढ़ा है किन्तु अपेक्षित गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा अभी लक्ष्य प्राप्ति नहीं कर सकी है। शिक्षा के क्षेत्र में जब तक क्रांतिकारी परिवर्तन नही होगा तबतक समाज में नैतिक मूल्यों, आदर्शो, समानता आदि की स्थापना संभव नहीं है।

जय प्रकाश मूल्य, आदर्श, नैतिकता पर विशेष बल देते हुए जीवन के लिए इसकी अपरिहार्यता, स्वीकार करते है। उनका मानना था कि गरिमा, स्वतंत्रता, बंधुता, समानता, न्याय आदि लोकतांत्रिक मूल्य की शिक्षा व्यक्ति एवं समाज के विकास के लिए नितान्त आवश्यक है। जे.पी. की विचारधारा के क्रम में ही आज भारत सरकार ने आई. ए .एस. जैसी प्रतिष्ठित शिक्षा के पाठ्यक्रम में नीति, मूल्य, ईमानदारी, नैतिकता नाम का एक अलग प्रश्न पत्र ही सम्मिलित कर दिया है जो कि इन मूल्यों की आवश्यकता की महत्ता को दर्शाती है।

यदि जयप्रकाश के शैक्षिक विचारों का विश्लेषण किया जाये तो निम्न बिन्दु सम्मुख प्रकट होते है:—

- स्त्रियों को पुरूषों के समान शिक्षा प्राप्त हो जिसमें देश के विकास ये उनकी भी हिस्सेदारी सुनिश्चित की जा सके। स्त्रियाँ समाज का अर्द्धांग है और उनकी शिक्षा को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। इसो परिप्रेक्ष्य में कई सरकारों ने महिला आरक्षण बिल संसद में पास कराने का प्रयास किया किन्तु अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हो पाई। परिणाम चाहे जो हो किन्तु आज नहीं तो कल यह बिल पास अवश्य होगा और विधायिका में 33 प्रतिशत आरक्षण अपने वास्तविक रूप में दिखेगा।
- वह वर्गविहीन समाज के निर्माण के लिए क्रिया प्रधान पाठ्प्रचार्य के निर्माण पर बल देते थे। पाठ्यक्रम निर्धारण में उन्होंने उपयोगितावाद, समाजिकतावाद के संदर्भ में विचार दिये। वर्तमान समय में सरकार द्वारा माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसमें कि व्यक्ति कौशल विकास कर रोजगार प्राप्त कर सकेगा।
- वह समाज की धार्मिक भावना से ऊपर उठकर पिछड़ी जातियों को आरक्षण देकर समाज की मुख्य धारा में लाना चाहते थे।
- जयप्रकाश लोहिया के समान अंग्रेजी का विरोध नहीं करते थ किन्तु भाषा के संदर्भ में वह मौन थे। उनकी लोकनीति में भाषा का स्थान गौण है। उनके द्वारा स्थापित शिक्षण संस्थाऐ अंग्रेजी में चलती थी किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि वह अंग्रेजी समर्थक थे। वह लोक शिक्षण का माध्यम हिन्दी बनाये थे किन्तु विश्व को समझाने हेतु अंग्रेजी को आवश्यक समझते थे।
- जय प्रकाश क अनुशासन के संदर्भ में विचार अत्यन्त मौलिक और प्रकृति प्रदत्त है। आज विद्यालयों में स्वानुशासन एवं आत्मनुसशान एक बिगड़ा हुआ रूप धारण कर रहा है। दमनात्मक अनुशासन का प्रयोग भी अधिकतर विद्यालयों में होता है क्योंकि इन विद्यालयों को लगता है कि अधिकांश बच्चे भय के कारण जल्दी सीख लेते हैं किन्तु वास्तविकता में यह सत्य नहीं है।

भारत सरकार ने स्वानुशासन, शांति शिक्षा का विचार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 के संदर्भ में दिया है जो कि जय प्रकाश की विचारधारा का ही विस्तार है।

- जय प्रकाश लिंग, जाति, धर्म, भाषा से ऊपर सभी की शिक्षा की बात करते थे। उन्होंने प्रत्येक बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने की बात की थी और उसी विचाराधारा के परिणामस्वरूप 86 वें संविधान संशोधन अधिनियम के अन्तर्गत निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम 2009 भारत सरकार द्वारा अधिनियमित किया गया जो 1 अप्रैल 2010 से पूरे भारतवर्ष में लागू है।
- जय प्रकाश छोटी–छोटो मशीनों के माध्यम से औद्योगीकरण के पक्षधर थे। वह सामुदायिक समाज की स्थापना करना चाहते थे क्योंकि विकन्दित व्यवस्था से ही औद्योगीकरण लाया जा सकता है।
- जयप्रकाश परम्परागत शिक्षा के विरोधी थे क्योकि परम्परागत शिक्षा में असमानता, धार्मिक अंधविश्वास, रूढ़िवादी प्रवृत्तियां व्याप्त थी।

स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा क्षेत्र में अब तक बहुत उन्नति हो चुकी है। अनेक आयोगों एवं समितियों के फलस्वरूप शिक्षा की अपेक्षित लक्ष्य प्राप्ति नहीं हो सकी है। विद्यालय की पहुंच तो बढ़ो है किन्तु छात्रों के मध्य में ही पढ़ाई छोड़ देने का क्रम अभी भी अधिक मात्रा में जारी है। शिक्षा के क्षेत्र में होते उन्मुक्त विकास के लिए आवश्यक है कि विद्यालय जाने वाले प्रत्येक छात्र को नियमित व निश्चित शिक्षा की परिधि पूर्ण करना आवश्यक है।

निष्कर्षतः जय प्रकाश नारायण ने एक नवीन सामाजिक अर्न्तदृष्टि प्रदान की है, जिसके आधार पर न केवल समकालीन राजनीतिक जीवन के संघर्षो एवं समस्याओं का विश्लेषण किया जा सकता है वरन उनकी अन्तदष्टि समकालीन भारतीय समाज में व्याप्त असमानता, विसंगति अन्तः विरोध को भी वैचारिक रूप से समझने में सहायता प्रदान करता है। जय प्रकाश नारायण आधुनिक सामाजिक संरचना के अन्तः द्वन्द को जिस रूप से उजागर करते हैं तथा उन्होंने उसे हल करने के लिए जो मार्ग अपनाया वह भारतीय परिस्थितियों के समानुकूल है। इस प्रकार जयप्रकाश नारायण भारतीय नव निर्माण के वाहक एव मसोहा है।

संदर्भ

1. बेनीपुरी श्री रामवृक्ष, 'जयप्रकाश नारायण एक जीवनी', किताब घर, नई दिल्ली।
2. भट्टाचार्य अजित, 'जेपी एक जीवनी', वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर।
3. शरद ओंकार, 'देश का प्रकाश जयप्रकाश', सहित्य भवन प्रा. लि., इलाहाबाद।
4. शाह कान्ति, 'जयप्रकाश की जीवन–यात्रा', सर्वसेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी।
5. नारायण जयप्रकाश, 'कारावास की कहानी', सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।
6. नारायण जयप्रकाश, 'मेरी विचार–यात्रा' भाग–1', सर्वसेवा सघ प्रकाशन, वाराणसी।
7. नारायण जयप्रकाश, 'मेरी विचार–यात्रा' भाग–2', सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।
8. नारायण जयप्रकाश, 'सामुदायिक समाज रूप और चिन्तन', सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।